International Journal of Jyotish Research
(वेदचक्षु)

ISSN: 2456-4427
Impact Factor: RJIF: 5.11
Jyotish 2017; 2(1): 24-27
© 2016 Jyotish
www.jyotishajournal.com
Received: 10-11-2016
Accepted: 12-12-2016

अरूण कुमार दीप
शोधच्छात्र दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

Correspondence
अरूण कुमार दीप
शोधच्छात्र दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

अथर्ववेद संहिता में आयुर्वेद विधान

अरूण कुमार दीप

प्रस्तावना

शरीर इन्द्रिय मन और आत्मा के संयोग का नाम आयु है। नित्य प्रति चलने से कभी एक क्षण भर के लिए भी न रुकने से इसे आयु कहते हैं आयु का ज्ञान जिस शिल्प या विद्या से पाया जाता है उसी का नाम आयुर्वेद है। यह आयुर्वेद मनुष्यों की भाँति वृक्ष, पशु, पक्षी आदि के साथ सम्बन्धित हैं। इसलिए इनके लिए भी संहिताऐं बनाई गयीं। [1] ज्ञान का प्रारम्भ सृष्टि से पूर्व हुआ, ऐसा भी कुछ विद्वानों का मत हैं उनके विचार से आयुर्वेद पहले उत्पन्न हुआ और उसके बाद प्रजा उत्पन्न हुई। [2] आयु के लिए क्या उपयोगी है, क्या अनुपयोगी है, यह जानना बहुत आवश्यक है इस प्रकार आयु सम्बन्धी ज्ञान शाश्वत है इसका बोध और उपदेश वेदादि प्राचीन ग्रन्थों में प्राप्त होता है।

वेदों के साथ आयुर्वेद का सम्बन्ध

वेद शब्द का अर्थ ज्ञान है (विद् ज्ञाने)। यह ज्ञान ऋग्वेद में आध्यात्मिक देवता सम्बन्धी है। ऋग्वेद की रचना पद्यात्मक है। यजुर्वेद में कर्मकाण्ड सम्बन्धी ज्ञान है। इसकी रचना गद्यमय है। 'साम' का सम्बन्ध गायन उपासना से है इसकी रचना गीत्यात्मक है। इन तीनों को त्रयी कहते हैं, अथर्ववेद का सम्बन्ध मानव जीवन के साथ अधिक है इसमें ज्ञान, कर्म और उपासना तीनों का समावेश है। इन चारों वेदों के चार उपांग हैं क्रमशः धनुर्वेद, गन्धर्ववेद, स्थापत्यवेद तथा आयुर्वेद, कुछ आचार्यों ने ऋग्वेद का उपांग आयुर्वेद को माना है, परन्तु आयुर्वेद के आचार्यों ने अर्थववेद का ही उपांग इसे स्वीकार किया है। [3] उपांग का अर्थ निकटवर्ती मुख्य भाग है- आयुर्वेद का अथर्ववेद के साथ अतिशय निकटतम सम्बन्ध होने के कारण अथर्ववेद का उपांग है।

आयुर्वेद शब्द का अर्थ

आयु का पर्याय चेतना अनुबन्ध जीवितानुबन्ध, धारी है (चरक सू.अ.-30/22)। यह आयु, शरीर, इन्द्रिय, मन और आत्मा इन चार का संयोग है। आयु का सम्बन्ध केवल शरीर से नहीं है और इसका ज्ञान भी आयुर्वेद नहीं। अपितु चारों का ज्ञान ही आयुर्वेद है। इसी दृष्टि से आत्मा और मन सम्बन्धित ज्ञान भी प्राचीन मत में आयुर्वेद ही है। [4] शरीर आत्मा का भोगायतन, पञ्च महाभूत विकारात्मक हैं। इन्द्रियाँ भाग का साधन हैं, मन अन्तःकरण है, आत्मा मोक्ष या ज्ञान का प्राप्त करने वाला है, इन चारों का अदृष्ट-कर्मवश से जो संयोग होता है वही आयु है। इसके लिए हित-अहित सुख-दुख का ज्ञान तथा आयु का मान जहाँ कहीं भी हो उसे आयुर्वेद कहते हैं। वेदों में भी इन्हीं बातों का ज्ञान है इसलिए काश्यप का यह कहना है कि जिस प्रकार ये हाथ में चार अंगुली और पाँचवां अंगूठा है। वह एक ही हाथ में रहता हुआ भी नाम और रूप से भिन्न है और सब ऊँगलियों पर शासन करता है। उसी प्रकार चारों वेदों के साथ रहता हुआ भी आयुर्वेद मुख्य हैं। इसी से कालिदास ने कहा है- शरीरमाद्यंखलु धर्म साधनम्। धर्म का मुख्य साधन शरीर है। [5]

अथर्ववेद में आयुर्वेद

अथर्ववेद में आयुर्वेद का विषय विशेष विस्तार से आया है अथर्ववेद का सम्बन्ध आयुर्वेद उपांग से है अथर्ववेद के सन्दर्भ में चरक सूत्र में कहा गया है- ''तत्र भिषजा पृष्टेनैव चतुर्णामृकसामयजुरथर्व वेदानामात्मनोऽथर्ववेद भक्तिरादेश्या। वेदो ह्याथर्वणो दानस्वस्त्यनबलिमंगल होमनियम प्रायश्चिततोवामंत्रादि परिग्रहाचिकित्सां प्राह। चिकित्सा चायुषोहितायोपण्डियते।'' (च.सू.अ.-30/21)

अथर्ववेद में विभिन्न प्रकार के वनस्पतियों का स्पष्ट नामोल्लेख तथा कृमि सम्बन्धी जानकारी, शल्यचिकित्सा और प्रसूतिविज्ञान आदि विषय मिलते हैं।

अथर्ववेद में वनस्पतियाँ

अथर्ववेद में कुछ वनस्पतियों का उल्लेख नाम से हैं। इनमें कुछ औषधियाँ स्पष्ट हैं और बहुत सी अनिर्णित हैं वनस्पतियों का उपयोग अलग-अलग स्वतन्त्र रूप में मिलता है। इनको मिश्रित रूप में नहीं बरता जाता था। प्राप्त कुछ वनस्पतियों का विवरण इस प्रकार है-

पिप्पली- अथर्ववेद में वर्णन मिलता है कि पिप्पली औषधि जीवन के लिए उपयोगी है। पिप्पली कहती है कि जो मनुष्य हमारा उपयोग करता है, वह कभी नष्ट नहीं होता। पिप्पली वात रोग और उन्माद अपस्मार (जिसमें चित्त उत्क्षिप्त हो जाता है) की उत्तम औषधि है। (अथर्व. 6/109/1-3)

पिप्पली कटु रखवाली होने से विपाक में मधुर है गुरु है, मध्य दर्जे में स्निग्ध और उष्ण है शरीर में क्लेद उत्पन्न करती है, वैद्यों को मान्य है यह जल्दी ही शुभ-अशुभ परिणाम करती है। इस प्रकार से अथर्ववेद में वर्णन प्राप्त होता है।

अपामार्ग- इसे लोकभाषा में ''चिरचिटा'' या ओगा कहते हैं अथर्ववेद में प्राप्त यह औषधि अवश्य महत्त्वशाली है, इसी से अत्रिपुत्र ने अपने दूसरे अध्याय का प्रारम्भ ''अपामार्ग-तण्डुलीय'' अध्याय से किया है।

क्षुधामारं तृष्णामारं तथा अनपत्यताम्।
अपामार्ग। त्वया वयं सर्वंतदपमृज्महे।।
अपामार्ग औषधिनां सर्वासामेक इद्वशी।
तेन ते मृज्म अस्थिमथ त्वमगदश्चर।।

(अथर्व. 4/17/6-8)

अपामार्ग क्षुधा तृष्णा अनपत्यता में प्रयुक्त होता हैं (अपामार्ग के चावलों की खीर खाने से भूख और प्यास नहीं लगती) सम्पूर्ण औषधियों की अपेक्षा अपामार्ग के ही ये काम होते है तथा इसे अत्यन्त गुणकारी बताया गया है।

पृश्निपर्णी- (पिठवन) इस वनस्पति के विषय में कहा गया है कि ''हे पृश्निवर्णी! तू न दीखने वाले, खून को पीने वाले, उन्नति को रोकने वाले गर्भ को खाने या ग्रहण करने वाले रोग को दूर कर, सहन कर!'' (अथर्व. 2/25/03)

इस मन्त्र में उन रोगों का पता चलता है जिनका सम्बन्ध रक्त से है। रक्त स्राव या जिनमें रक्त नहीं बढ़ता उन रोगों में पृश्विपर्णी का उपयोग किया जाता है। आयुर्वेद में पृश्निपर्णी दशमूल, लघुपंचमूल की एक औषधि है।

रोहिणी- (मांसरोहिणी) रोहिणि नामक जो वनस्पति है, उसमें मांसादि की शीघ्र वृद्धि होती है। मज्जा से मज्जा, मांस से मांस, चर्म से चर्म, अस्थि से अस्थि इस वनस्पति द्वारा बढ़ते हैं। जिस प्रकार उत्तम तक्षक (बढ़ई) रथ को ठीक करता है उसी प्रकार से रोहिणी वनस्पति शरीर रूपी रथ को शीघ्र ठीक करती है। (अथर्व.-4/12)

''तस्मान्मांसमाप्यायते मांसेन भूयस्तरमन्येभयः शरीरधातुभ्यस्तथा लोहितं लोहितेन, मेदो मेदसा, वसा वसया, अस्थि तरुणास्थना, मज्ज्ञा मज्जया, शुक्रं शुक्रेण, गर्भस्त्वामगर्भेण।''

वेद के इस मन्त्र से अत्तिपुत्र ने बहुत ही सुन्दरता से स्पष्ट किया है- ''सर्वदा सर्वभावनां सामान्यं बृद्धिकारणम्'' अर्थात् समान को बढ़ाता है। इसी नियम से मांस से मांस, रक्त से रक्त आदि की वृद्धि होती है। इस अर्थ में रोहिणी नामक औषधि प्रत्येक वस्तु का रोहण करती है। [6]

विभिन्न वनस्पतियाँ

अथर्ववेद में इस प्रकार से विभिन्न प्रकार के औषधियों का वर्णन प्राप्त होता है-

यत्राश्वत्था न्यग्रोधा महावृक्षाशिखण्डिनः।
तत परेता अपसरसः प्रति बुद्धा अभूतन्।।
यत्र वः प्रेंखा हरता अर्जुना उत्।
यत्राघाटाः कर्मयः सेवन्ति।।
तत्परेता अप्सरसः प्रति बुद्धा अभूतन्।।
एयमगन्नोषधीनां वीरुधां वीर्यावती।
अज शृंग्याराटकी तीक्ष्ण शृंगी व्यृषतु।।

(अथर्व.-4/37/4-6)

जहाँ पर अश्वत्थ (पीपल), न्यग्रोध (बरगद) ये महावृक्ष अपने पत्रों के साथ प्रसन्नता से रहते हैं। अर्जुन पिलखन, अघाट, कर्करी, अज शृंगी, अराटकी, तीक्ष्ण शृंगी ये वृक्ष तथा वनस्पतियाँ रहती हैं वहाँ पर पानी में चरने वाले विषजन्तु नहीं रहते।

इनके अतिरिक्त श्यामा नामक वनष्पति का वर्णन अथर्ववेद में प्राप्त होता है जिस औषधि के द्वारा कुष्ट रोग साध्य है। (अथर्व. 1/2/4)

श्यामा के सिवाय, रामा, कृष्णा अक्सिनि ये तीन औषधियाँ किलास-पलित (श्वेत वर्ण या श्वेत बिन्दु, सफेद छोटे-छोटे दाग जो त्वचा में होते हैं) को नष्ट करती है। [7]

इनसे अतिरिक्त अनेक वनस्पतियों तथा औषधियों का उल्लेख मिलता है कुछ औषधियों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है- वल्मीक में मिलने वाली औषधि विशेष रूप से अतिसार अतिमूत्र आदि रोग की शान्ति (2/3/1-6) हरिण शृंग और उसके चर्म से क्षय कुष्ठ अपस्मरादि नाशन (3/7/1-3) शतवीर्या, दूर्वा से दीर्घायुष्य नाना रोग शान्ति (3/11/1-8), वृषा शुष्मादि औषधियों से वृष्यत्व (4/4/1-8), कुष्ठ औषधि का वर्णन (6/95/1-3) गुग्गुल धूप की गन्ध से यक्ष्णनाशन (19/35/1-3) विष दोहन विद्या से विष प्रतिकार (8/5/1-16) आदि विषय अथर्ववेद में पाये जाते हैं। [8]

कृमि विज्ञान- कृमियों से अभिप्राय रोगोत्पादक सूक्ष्म जीवाणुओं से है, जो कि सामान्यत: आँख से दृश्यमान नहीं हैं। ये मनुष्य को हानि पहुँचाते हैं। इनमें से बहुतेरे सर्प सर्पणशील रेंगने वाले हैं। इनको नष्ट करने के लिए कहा गया है।

रक्त और मांस को दूषित करने वाले जन्तुओं को बहुत बड़े मारने के साधनों से मारता हूँ। जो जन्तु मेरे द्वारा बनाई औषधी आदि से पीड़ित हैं या जो नहीं पीड़ित हैं वे सब सूख गये हैं तथा जो बच गये उनको मन्त्रों के बल से मारने की बात कहीं है। [9]

इस प्रकार अनेक स्थानों पर ऐसे कृमियों को नष्ट करने का उल्लेख प्राप्त होता हैं जो मानव तथा पशु पक्षियों का क्षति पहुँचाते हैं।

कृमियों के नाम- कृमि वर्णन वेदमन्त्रों में बहुत प्रकार से आया है। ''रक्षो रक्षितव्यमस्माद् रहसि क्षिणोति इति वा रात्रौ रक्षत्र इति वा'' (नि. -4/18) अत्रिण: (अ.-6/32/3), अलिंश: (8/6/1) चिपटनेवाला, कृव्याद: (5/29/8) कच्चा मांश खाने वाला। इस प्रकार के लगभग सौ से अधिक नाम श्री रामगोपाल शास्त्री ने कृमियों के लिए वेदों में एकत्र किए हैं।

विभिन्न प्रकार के रोग एवं चिकित्सा

अथर्ववेद में भिन्न-भिन्न अंगों में होने वाले रोगों के नामों का उल्लेख मिलता है। यथा- सिर पीड़ा, उदर रोग कर्ण रोग, वात, पित्त, कफ, विषयक, हृदय रोग विषयक जानकारी प्राप्त होती है तथा इन रोगों के निदान भी बातया गया है। अथर्ववेद में वर्णित कुछ रोग तथा निदान इस प्रकार से है-

विलास व कुष्ठ रोग चिकित्सा- इसके लिए श्यामा औषधि का उल्लेख पहले आ चुका है। परन्तु अन्य औषधियों का भी उल्लेख इसमें प्राप्त होता है।

अस्थिजस्य किलासस्य तनूजस्य च यत् त्वचि।
दूष्याकृतस्य ब्रह्मणा लक्ष्म श्वेतमनीनशम्।।
आसुरीचक्रे प्रथमेदं किलासभेषजमिदं किलासनाशनम्।
अनीनशत् किलासं सरुपामकत्वम्।।
सरुपानाम ते माता सरुपीनाम ते पिता।
सरुपकृत तमोषधे सा सरुपमिदेकृधि।।
यशमासरुपङ्करणी पृथिव्या उध्यद्भृता।
इदं सु प्रसाधय पुनारुपाणि कल्पय।।
(अथर्व. 1/23/24)

किलास के तीन नाम हैं- दारुण, अरुण और श्वित्र। दोष के रक्त में आश्रित होने से रंग लाल होता है भेद में आश्रित होने से श्वेत वर्ण होता है। मांस में आश्रित होने से ताम्र वर्ण होता है।

दारुणं दारुणं श्वित्रं किलासं नामभिस्त्रिभि:।
विज्ञेयं त्रिविधं तच्च त्रिदोषं प्रायशश्च तत्।।
दोषे रक्ताश्रिते रक्तं ताम्रं मांस समाश्रिते।
श्वेदं मेद: श्रिते श्वित्रं गुरु तच्चोत्तरोत्तरम्।।
(माधव)

केशवर्धन- अथर्ववेद में बालों को बढ़ाने तथा मजबूत करने के लिए औषधियों से प्रार्थना की गई है कि हे औषधि! जिसे जमदग्न ने खोदा था। उसी बालों को बढ़ाने वाली औषधी को मैं खोदता हूँ। [10]

क्लीवत्व का नाश- वेद में औषधी से प्रार्थना की गई है कि हे औषधी इस पुरुष की क्लीवता को नष्ट कर दो।

त्वं वीरुधं श्रेष्ठतमाभिश्रुताष्योषधे।
इमं में अद्य पुरुषं क्लीवमोपशिनं कृधि।।
क्लीवं कृध्योपशिनमथो कुरीरिणं कृधि।
क्लीवं क्लीवं त्वाकारं वध्रे वध्रि त्वकामरसारसम्।
कुरीरमस्य शीर्षाणि क्रम्बं चधिनिदध्मसि।।
(अथर्व.-7/38/1-2-3)

हृदय रोग तथा कामला रोग चिकित्सा- हृदय रोग तथा कामला रोग की चिकित्सा का वेद में स्पष्ट उल्लेख है यह चिकित्सा सूर्य की किरणों से होती है।

मूढ़ गर्भ चिकित्सा- गर्भाशय को चीरकर गर्भ को बाहर करने तथा रुके हुए मूत्र को मूत्राशय से बाहर निकालने का उल्लेख अथर्ववेद में स्पष्ट है। यथा-

वि ते भिनद्भि मेहनं वि योनि: विगवीनिके।
वि मातरं च पुत्रं च वि कुमारं जरायुणाव जरायुपद्यताम्
(अथर्व. 1/11/5)

हे गर्भिणि! तेरे मूत्र प्रवाहण द्वार का विदारण करता हूँ तेरी योनि को भी विदीर्ण करता हूँ जिससे गर्भ बाहर आ जाय तथा योनि के पार्श्ववर्ती गवीनिकों का भी (बाहर आने में रूकावट देने वाली नाड़ियों का भी) विदारण करता हूँ।

अश्मरी या मूत्राघात् चिकित्सा- मूत्राशय में मूत्राशय की पार्श्ववर्तिनी गवीनी (यूरेटरस) में या वृक्कों में यदि मूत्र रूक जाता हो तो उसे वहाँ से शास्त्र कर्म अन्य प्रकार से बाहर किया जाता है।

यदान्त्रेषु गवीन्योर्यद वस्तावधि संश्रुतम्।
एव तेमूत्रं मुच्यतां बहिर्वालिति सर्वकम्
प्रते भिनभि मेहनं वर्तं बेशन्त्या इव।
एवा ते मूत्रं मुच्यतां बहिर्वालिति सर्वकम्।।
(अथर्व. 1/3/6-9)

जलोदर- यह रोग वरुण के अपराध के कारण होता है। अथर्ववेद में तीन सूक्तों में (1-10, 7-83, 6-24) इस रोग का उल्लेख है अथर्ववेद के छठे सूक्त में (6-29-1) में हृदय रोग का उल्लेख है। इसमें बताया गया है कि जलोदर रोग हृद रोग का परिणाम है। अथर्ववेद में इस रोग को दूर करने के लिए प्रार्थना की गई है। तथा इनसे बचने के उपाय भी बताये है।

राजयक्ष्मा- (क्षय) शब्द ऋग्वेद में (10/163) तथा अथर्ववेद (3/11/1) में आया है। सांयण ने राजयक्ष्मा से वर्तमान कालीन क्षय रोग ही लिया है। इसके लिए तैत्तिरीय संहिता का वचन है- ''राजा अथवा चन्द्रमा को क्षयरोग पहले हुआ था इसलिए इसे राजयक्ष्मा कहते है।'' (तै.स. 2/5-6) राज्ञश्चन्द्रमसो यस्यादभ्देष क्रिलामयः। तस्मात्त राजयक्ष्मेति केचिदाहुः पुनर्जनाः। (सुश्रुत उ. अ.-41/5)

अर्श- वाजसनेयि संहिता के एक ही मन्त्र में बलास, अर्श, उपचित और पकारु, इन चार रोगों का उल्लेख है इनमें अर्श शब्द स्पष्ट है (अरिवत् शाति-हिनस्ति इति अर्श) शत्रु के समान पीड़ा देता है। उपचित से अपची अर्थ ले सकते है क्योंकि अपचि का अन्यत्र (अ.वे. 6/83) उल्लेख है। बलाक्ष शब्द अथर्व. वेद में रोग अर्थ में आता है। (4/9/, 5/22/11, 6/14/1 आदि में) सायण ने एक स्थान में बलास का अर्थ सन्निपात कहा है। (अथर्व.-19/34/10) स्थान पर क्षय अर्थ किया है। जार के साथ काश और बलास का उल्लेख अथर्ववेद में (5/22/11) है।

जम्भ- अथर्ववेद में (2/4/2, 8/1/16) में जम्भ शब्द का उल्लेख है इस रोग में दोनों जबड़े जुड़ जाते हैं। इसके तथा कौशिक सूत्र के विनियोग के अनुसार बेवर, ब्लूमफील्ड आदि विद्वानों के मत से बालक में होने वाले आक्षेप या अपतंत्रक अपतानक की स्थिति स्पष्ट होती है। जैसा कि सुश्रुत में कहा गया हैं (एवं ग्रहाः समुत्पन्न बालान् गृह्णन्ति चाप्यतः। ग्रहोपसृष्टा बालास्तु दुश्चिकित्स्यतया मताः।। उत्तर. अ. -37/20)

तक्म (ज्वर)- वेद में ज्वर के लिए ''तक्म'' शब्द आता है ''तकि कृच्छजीवने।'' जिस प्रकार जवर यक्ष्म रोग सामान्य रोग अर्थ में चलने के साथ-साथ विशेष अर्थ में भी बरते जाते हैं, उसी प्रकार तवम शब्द है, जिसका अर्थ सामान्य रोग भी है और विशेष अर्थ ज्वर भी है अथर्ववेद में कहा है कि व तक्म के लिए नमस्कार करके नीचे भेजता हूँ। [10]

ओको अस्य मूजवन्त ओको अस्य महावृषाः।
यावज्जातस्तक्मंस्तावानसि वल्हिकेषु न्योचरः।।
(अथर्व.- 5/22/5)

इस तक्म का स्थान मूजवान है, इसका स्थान महाबल है। हे तवम्! जब से तू उत्पन्न हुआ है वल्हिकों में ही रहता है। मूजवान इस पर्वत का वाजसनेयि संहिता में उल्लेख है।

इनके अतिरिक्त अनेक प्रकार के रोगों तथा निदान तथा निदान में उपयोग आने वाली रसायन वनस्पतियों का उल्लेख प्राप्त होात है।

उपसंहार

अथर्ववेद में आये हुए आयुर्वेद सम्बन्धि विषयों का साक्ष करने पर पता चलता है कि अथर्ववेद काल के अन्त में तथा सूत्र ग्रन्थों के समय तक आयुर्वेद में विकास क्रम प्रारम्भ हो गया था। वेदों में वर्णित रोगों और वनस्पतियों के सम्बन्ध में खोज प्रारम्भ हो गई थी। तथा इस में रोगों के लक्षण, उनकी पहचान, चिकित्सा का क्रम क्रमशः विकसित होता गया जो कि बुद्ध काल में अपने पूर्ण यौवन पर पहुँच गया था। बुद्ध काल से पूर्व आथर्वण वैद्य का ही सब प्रकार की चिकित्सा का उल्लेख मिलता है इनकी चिकित्सा सीमित थी। वेदों में सौ या सवा सौ वनस्पतियों का ही उल्लेख है। सम्भवतः रोग भी इतने नहीं थे क्योंकि जीवन सादा और सरल था। अथर्ववेद में शतायु होने का उल्लेख अनेक बार किया गया है शतायु होने के साथ ही जीवन निरोग और स्वस्थ हो यह भी उल्लेख किया गया है। मनुष्य पूर्ण आयु तक जीवित रहे यह अथर्ववेद का उद्देश्य है। मनुष्य का आहार किस प्रकार होना चाहिए, किस प्रकार रोग शरीर में प्रवेश न करे यह बहुधा उल्लेख मिलता है। इससे ज्ञात होता है कि अथर्ववेद और आयुर्वेद का घनिष्ठ सम्बन्ध है। अथर्ववेद के यथार्थ ज्ञान के लिए आयुर्वेद का ज्ञान होना अनिवार्य है। यदि वर्तमान में प्रकृत वेद मन्त्रों का अनुकरण कर इनके अनुसार जीवन-यापन किया जाय तो तत्कालीन मानव सदृश आज भी सुखपूर्वक निरोगी जीवन व्यतीत कर सकते हैं।

संदर्भ सुची

1. अस्ति, अश्व, पशु, पक्षी, वृक्ष, लता, आदि के लिए भी आयुर्वेद बना था यथा-हाथियों के लिए पालकाप्य घोड़ों के लिए शालिहोत्र। अग्निपुराण के अनुसार सुश्रुत के प्रति धन्वन्तरि ने मनुष्य, अश्व, गौ, गज वृक्ष के लिए भी आयुर्वेद कहा है।
   (क) शालिहोत्रः सुश्रुताय हयायुर्वेदमुक्तवान।
   पालकाप्योऽङ्गराजाय गजायुर्वेदमब्रवीत्।।
2. अनुत्पाद्यैवप्रजा आयुर्वेदमेवाग्रेऽसृजत्। सुश्रुत. सूत्र-1
   आयुर्वेदमेवाग्रेऽसृजत ततो विश्वानि भूतानि। (काश्यप संहिता)
3. चतुर्णामृकसामयजुरथर्ववेदानामथर्ववेदे भक्तिरादेश्या। (च.सू.अ.-30)
   इह खलु आयुर्वेदमष्टाङ्गमथर्ववेदस्य। (सुश्रुत स.अ.-1), अथर्ववेदोपनिषत्सु प्रागुत्पन्नः। ऋग्वेदयजुर्वेद-सामवेदाथर्ववेदभ्यः पञ्चमोऽयमायुर्वेदः। (काश्यप)
4. आयुरस्मिन् विद्यतेऽनेन वाऽऽयुर्विदन्तीत्यायुर्वेदः। (सुश्रुत सू.अ.-1)
5. हिताहितं सुखं दुःखमायुस्तस्य हिताहितम्।
   मानं च तच्च यत्रोवतमायुर्वेदः स उच्यते।। (चरक सू.अ.-1/41)
6. रोहिष्यसि रोहण्यस्थनश्छिन्नस्थो रोहणी। रोहयेदमरुधति (अथर्व. -4/12/1)
7. नक्तं जातस्योषधे रामे कृष्णे असिक्नि च।
   इदं रजनि रंजय किलासं पलितं च यत्।।
   किलासं च पलितं च निरितो नाशया पृषत्।
   आ त्वा स्वो विशतां वर्णः परा शुक्लानि पातय।।
   पुष्पवतीः प्रसूमतीः फलिनीरफला उत।
   समातर इव दुहामस्मा अरिष्टतातये।। (अथर्व.-8/7/27)
8. विस्तार के लिए- ''अथर्ववेद संहिता'' श्रीपाद दामोदर सातवलेकर प्रकाशित तथा काश्यप संहिता को देख सकते है।
9. अथर्व. 2/31/3
10. अथर्व.-06/126/1-3
11. 'अधरां च प्रहणोमि नमः कृत्वा तवमने' अथर्व.-5/22/4